भारतीय लोक कला का समाकालीन कला में योगदान

ओ.पी. मिश्रा
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
एम.बी.एस.एफ.
नंदलाल बोस सुभारती कॉलेज ऑफ फाईन आर्टस एंड फैशन डिज़ाईन
स्वामी विवेकानंद सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ।

भारतीय चित्रकला का स्वरूप परामपरावादी रहा है। भारतीय चित्रकला में परम्परा से तात्पर्य है कि वह निश्चित सिद्धान्तो में बंधी है।

भारतीय चित्रकला का परामपरावादी स्वरूप, अजन्ता, मुगल, पहाड़ी, राजस्थानी शैलियो में ही नहीं लोककला मे भी इनके समुचित दर्शन होते है। भारतीय चित्रकला एवं शिल्पकला का उद्‌गम् धर्म सें माना जाता है एवं उसका विकास आध्यात्मिक मूल्यों एवं सामाजिक परिदृश्य पर किया जाता है। यह सार्वभौमिक सत्य है कि, अनेक प्राचीन ग्रन्थो में चित्रकला के उद्‌गम, विकास स्वरूप व सृजन की प्रक्रिया का उल्लेख मिलता है। वात्यायन का कामसूत्र, मानसो उल्लास, शिल्परत्न व सामरांगण सूत्रधार और चित्रसूत्र मे इसका विस्तार से वर्णन है। समभवतः इन्हीं विधाओं का अपभ्रंश स्वरूप भारतीय जनमानस मे व्याप्त रहा होगा।

भारतीय समकालीन आधुनिक कला को समझने के लिये हमें लोककला की पावनगंगा में गोते लगाने होंगे। इसी पावन गंगा से प्राप्त विभिन्न उपादानों से अनेकानेक कलाकारों ने अपनी रचनाओं की पुतली व तृप्ती प्राप्त की। लोक चित्रों, लधु चित्रों, पांडुलिपियों के साथ–साथ लोक कलायें भी शामिल हैं। लोक कलाओं में असम के सोलपिय से निर्मित चित्र, पश्चिम बंगाल के विष्णुपुर, मिदानपुर एवं कालीघाट क्षेत्र के पट्‌चित्र, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, और पंजाब के ग्रामीण इलाको में मिट्‌टी की दीवारों पर उत्कीर्ण सांझी अहोई, दीपावली इत्यादि से सम्बन्धित सृजनात्मक चित्रण, बिहार की मिथिला लोक कला, महाराष्ट्र के वरली चित्र, उड़ीसा के अनुष्ठानिक चित्रांकन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। साथ ही साथ हैदराबाद की कलमकारी, राजस्थान की पिछवई एवं फड़ की प• बंगाल, असम उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश एवं राजस्थान की आनुष्ठानिक आकृतियाँ उड़ीसा, प० बंगाल, उ०प्रदेश, राजस्थान की एवं आन्ध्र प्रदेश की टेराकोटा एवं काष्ट उत्कीर्ण मूर्तियाँ एवं खिलौने तथा पूरे देश में विभिन्न त्योहारों पर की जाने वाली भूमि अलंकरण की कला उपलब्ध है।

चूंकी भारतीय कलाकार की रूची ऐसे अनुभवों में रही है जो जीवन व आत्मा को जोड़े एवं जो बहुधर्मी तथा जीवंत आतरिक भौतिक के प्रतिनिधित्वकारी कार्यशीलता की तरफ है, जो बाहरी भौतिक की तरफ नहीं है। जैसा की सर्वविदित है कि भारतीय लोककला की सम्भ्रान्त विरासत को 1930 के दशक मे श्री यामिनी रॉय ने सहज स्वरूप में ही भाप लिया था। जिसे कालांतर से वर्तमान तक विभिन्न कलाविदो ने अपनी–अपनी कलाकृतियों को समृद्ध बनाने के लिये लोक कला एवं लोकरीति के ही अपने कलाकर्म का आधार बनाया है।

उपलब्ध ऐतिहासिक साक्ष्य जो लोक–रीति व समकालीन रीति में समान रूप से उपलब्ध है। जिसे रोशनी मे स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

अतः स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि, भारतीय आधुनिक कला की आत्मा भारत की लोक कला है जिसे भिन्न–भिन्न समय में कलाविदो ने अपनाकर अपने कला कर्म को पूर्णता प्रदान की। इन कला विदों में सबसे प्रथम एवं महत्वपूर्ण स्थान श्री यामिनी रायॅ का है, जो 1930 के दशक मे लोक कला की सार्थकता को भांप गये थे। जिस कारण पाश्चात्य का अधानुकरण छोड़ कर वे लोक कला को अपनी शैली का आधार बनाया आप पर प० बंगाल के बाकूरा जिले की लोक शैली का विशेष प्रभाव था। इसके पश्चात् उन पर कालीघाट के पट–चित्र शैली का प्रभाव पड़ा जिसमें सपाट भूरे एवं सलेटी धरातलों पर कागज की गहरी तथा सशक्त रेखाओं द्वारा चित्रण किया जाता है। जिसका प्रभाव आपकी कलाकृति स्त्रीयाँ तथा माँ एवं शिशु में स्पष्ट रूप से दिखता है। तत् पश्चात उनकी कृतियों में बंगाल के अन्य क्षेत्रों की लोकशैली जैसे–बाकुरा तथा हुगली से प्रेरणा लेनी प्रारम्भ कर दी। जिसमे चमकदार रंग तथा तीखी रेखाओं का अधिक प्रयोग है। आप ने अपने रंगो को अधिक समृद्ध किया।

चूंकि आपके चित्र में रामायण की तुलना में कृष्ण लीला के चित्र अधिक हैं। आप की कृष्ण लीला के चित्रों में अधिक विष्णु और वॉशगाटी के मंदिरों की पकाई मिट्‌टी के फलकों से प्रेरणा ग्रहण की है। जो सम्भवतः स्वदेशी कला साधना थी। यामिनी रायॅ के कला–यात्राओं के साथ–साथ सन् 1940 तथा 1950 के दशक भारत में ग्रामीण चीजों के तरफ स्थान बढ़ा। जिस कारण कला मे राष्ट्रवाद की प्रेरणा प्रबल हुई। नंदलाल बोस एव विनोद बिहारी मुखर्जी की कलाकृतियाँ इसकी प्रत्यक्ष गवाह है। तत् पश्चात् 1950 के दशक के अनेक कलाकारों द्वारा रेखा को प्रमुखता दी गई जिसमें सान्याल, हुसैन, शिवाक्स चावड़ा इत्यादि कलाविद शामिल थे। चूंकि रेखा भारतीय शास्त्रीय एव लोक दोनों कलाओं की मूल–भूत तत्वों में से एक है। और इन्ही विशेषताओं को अपनाकर तत्कालीन

समय के अनेक कलाकारों ने अपनी कला साधना को आगे बढ़ाया। जिसमें आर० डी० रावल, कुमार मंगल सिंधजी, खेड़ीदास, पी० खेमराज इत्यादि हैं। अनेक कलाकारों ने भारतीय जीवन एव उसकी धार्मिक मान्याताओं तथा लोक शैली को सहज रूप से आत्मसात किया है।

सन् 1960 के दशक ने इस मान्यताओं व परम्पराओं के समुचित प्रयोगों को आगे बढ़ाया जो 1970 के दशकों तथा अनवरत रूप से चलता रहा। हलांकी कलाकारों का झुकाव टेक्चर एवं अमूर्तन की तरफ ज्यादा होने लगा था। किन्तु कुछ कलाकारों की रैखिक शैली के प्रति दिलचस्पी देखी जा सकती है। उदाहराण : श्री के०सी०एस० पनीक्कर के डिजाइन, हस्तशील्प के प्रतिकों व ज्यामितीय आकारों के प्रति झुकाव स्पष्ट करती है।

श्री बद्रीनारायण ने अपनी कृतियों में मोटी–मोटी रेखाओं के अनवरत प्रयोग में लोक भाषा की फंतासीओ को रचा। जो लोक कला की पौराणीक आख्याओं में है। जे० सुल्तान अली तो अपनी संरचनात्मकता को लोक कला के कुंज मे प्रवेश कर निश्चिन्त होते प्रतीत होते हैं। आपने जनजातीय कलाओं का सुन्दर समन्य किया है। जो उनके द्वारा बनाये गये मुखौटों, काष्ट उत्कीर्णनो एव यात्रिक रूपाकारो मे सहज दृष्टिगोचर होता है।

इसके साथ ही साथ समकालीन कलाकार वाई०के०शुक्ला, ज्योती भट्ट, ए० अलफाज़ों, आर०डी० भास्करन, एस० नन्दगोपाल, लक्ष्मण यादव में एव एल०मनुस्वामी की कृतियों में लोक तथा जनजातीय स्त्रोतों से प्राप्त प्रतीकों, चिन्हों तथा अभिप्रायों का खुलकर प्रयोग किया है। उन कलाकारों के कृतियो मे पूर्ण भारतीयता लोक भावना के साथ–साथ समकालीन पुट भी समाहित है।

वे कलाकार जिनमें तांत्रीक व मंडला के तत्वों का असर दिखता है। जैसे राजयमा,मोहम्मद यासीन, बीरेदे, श्री आर०संतोष, ओम प्रकाश है। श्री०स्वामीनाथ, जय झरोटिया, भूपेन्द्र देसाई, सोमनाथ होर इत्यादि की कृतियों मे लोक कला के मुहावरों का निजी स्तर पर शक्तिशाली प्रयोग है।

इन चित्रकारों के साथ–साथ जिन मूर्तिकारों ने लोक तथा जनजातीय कला तकनीकों का सृजनात्मक लाभ उठाया उनमें मीरा मुखर्जी, जानकी राम, के० जी० सुब्रमण्यम (टेराकोटा रीलीफ एव ग्लास), नंदगोपाल (जनजातीय मूर्तियों से प्रेरीत होकर वेलड़ीग सित्वरीग व कलरींग तकनीकों का अपनी पेन्टिग में इस्तेमाल मृणलिनी मुखर्जी (फाइबर ग्लास) लक्ष्मी गौड (टेराकोटा) इत्यादि।
अतः समकालीन भारतीय कला एवं समकालीन भारतीय कलाकारों की लोक संस्कृति कला के प्रति बढ़ती रूची इन कलाकर्मों की जननी है। हम पाते हैं कि, लोक कला के प्रयुक्त विंब अभिप्राय तथा प्रतिकों से हमें किसी खास ऐतिहासिक विशेषतायें एवं संस्कृति के प्रमाणिक चिन्ह प्राप्त होते हैं तथा उनकी जीवन शैली, उनके विश्वास एव उनके अनुष्ठान के बारे में सही जानकारी देते है।
समकालीन कलाकार जो इन लोक कला रूपों के प्रशंसा के साथ–साथ अपनी कला में इनका उपयोग सहायता एवं सतर्कता से करता है। ताकि उसकी कला सृजन की सार्थकता को प्राप्त कर सके। जैसा कि श्री रिचर्ड जेनॉय अपनी पुस्तक "दि स्पीकिंग ट्री" में विचार व्यक्त किया है– पारम्परिक शक्तियाँ बहुत बलवती हों भले ही मावीय पक्ष के स्वभाव का निर्धारण करती हों पर नवचार का विरोध जरूर है।

चूंकि आधुनिकता के आगमन के साथ ही परम्परा पर कुठाराधात होता है। परम्परा पर कीमती मूल्यों को सहेजते हुये सृजन की नवीन परम्परा का सूत्रपात ही समकालिन कला के मूल तत्वों में समाहित है।

अतः उक्त उदाहरणों साक्ष्यों एवं दशकों में समकालीन कला को यदि विश्लेषण करें जो पुर्ववत् बताये जा चुके हैं तो हमे यह ज्ञात होता है कि, आधुनिक समकालीन कला पारम्परिक एवं जनजातीय कलाओं के अभाव मे प्राण–विहिन शरीर के समान हो जिसका आकार–प्रकार तो है किन्तु भावात्मक चेतना नहीं है, जो उसे कला के सर्वोत्तम आनन्द सत्यम् शिवम् सुन्दरम् की सत् अनुभूती करा सके। लगभग–लगभग भारत के अधिक्तर कलाकार जो समकालीन कला के उद् धोषक, षोषक, एवं संवाहक के रूप मे कार्य करते आ रहे हैं। उनके लिये पारंपरीक एवं जनजातीय कलाऐं, म्रदभांड, मूर्तियाँ, प्रतीक चिन्ह एवं रंग संयोजन सदैव प्रेरक एव अनुकरणीय रहे हैं। अतः स्पश्ट है कि, भारतीय समकालीन कला का जन्म भारतीय लोक कला की कोख़ से ही हुआ है।

सन्दर्भ–सूचीः–

1. अग्रवाल, गिर्राज किशोर, भारतीय आधुनिक चित्रकला, संजय पब्लिकेशन, आगरा, 2002.
2. जोशी, डॉ0 ज्योतिष, समकालीन कला, ललित कला अकादमी, अंक–35 मार्च–जून–2008.
3. भारद्वाज, विनोद, बृहद आधुनिक कला को ा, वाणी प्रका ान, दिल्ली, 2006.
4. विरंजन, राम, समकालीन भारतीय कला, निर्मल बुक एजेन्सी, कुरूक्षेत्र, 2003
5. जौहरी, डॉ0 रितु, भारतीय कला समीक्षा (विचार व रूप), राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 2013
6. समकालीन कला, ललित कला अकादमी, अंक–25, नवम्बर 2004– फरवरी 2005, पृष्ठ– 61,57,53
7. समकालीन कला, ललित कला अकादमी, अंक–28, नवम्बर 2005– फरवरी 2006, पृष्ठ– 69,70
8. कला दीर्घा–दृश्य कला की अर्न्तदेशीय पत्रिका, अंक–23, अक्टूबर 2011 Vol-12.
9. कला दीर्घा–समकालीन कला का विकास, अंक–21, अक्टूबर 2010 टवस.11ण
10. समकालीन कला, ललित कला अकादमी, प्रवेाांक–1982
11. समकालीन कला, ललित कला अकादमी अंक–27, जुलाई–अक्टूबर 2005
12. समकालीन कला, ललित कला अकादमी, अंक–48, फरवरी–2016